बंगाल में कृषक विद्रोह (1760–1825 ई.)

डॉ. राजेश कुमार

अठारहवीं सदी के अंतिम और उन्नीसवीं सदी के आरंभिक वर्षों में कंपनी की सरकार के मालगुजारी संबंधी सुधारों ने भारत के ग्रामीण समाज को बुनियादी तौर पर प्रभावित और परिवर्तित किया। इस नये ढाँचे की एक झलक पाने के लिए डेनियल थॉनएर और डी. एन. धनगर द्वारा विकसित सामान्य मॉडल का सहारा ले सकते हैं जिसमें हम निश्चित ही क्षेत्रीय भिन्नताओं की सम्भावना रखेंगे। इस मॉडल में पहला समूह बड़ी जागीरों, अक्सर अनेक गाँवों पर आधारित जागीरों, पर मालिकाना अधिकारों से सम्पन्न जमींदारों का था। ये एक अनुपस्थित लगान भोगी वर्ग के लोग थे, जिनकी भूमि के प्रबंध या कृषि के सुधार में दिलचस्पी नहीं थी। दूसरे समूह में धनी लोग आते थे, जिनको आगे दो समूहों में बांटा जा सकता था : धनी भूस्वामी और धनी पट्टेदार वर्ग में। जमीन पर पहले उपसमूह को मालिकाना हक प्राप्त थे, पर आमतौर पर अपने ही गांव में और वे खेती में खुद भाग लेते थे। दूसरी ओर धनी पट्टदारों के पास काफी बड़ी जोतें होती थीं, उनके दखली अधिकारों को सुरक्षा प्राप्त होती थी और वे अपने जमींदारों को नाममात्र लगान देते थे। तीसरे समूह में मझोले किसान आते थे जिनको निम्न समूहों में बाँटा जा सकता था : (1) मझोले आकार के जोतों के स्वामी या आत्मनिर्भर किसान जो पारिवारिक श्रम के सहारे काम करते थे, (2) बड़ी जोतों वाले पट्टेदार जो दूसरी विशेष सुविधाओं से सम्पन्न पट्टेदार से अधिक लगान देते थे। चौथे समूह में गरीब किसान आते थे अर्थात् ऐसी छोटी जोतों के स्वामी जो परिवार के निर्वाह के लिए पर्याप्त नहीं होती थी, छोटी जोतों वाले पट्टेदार जिनकी पट्टेदारी की कोई सुरक्षा प्राप्त नहीं थी तथा बंटाईदार या गैर–दखली कास्तकार। धनगर के अनुसार पाँच समूह मजदूरों का होता था। अर्थात यह एक पिरामिड के आकार का खेतिहर समाज था, जिसमें 65–70 प्रतिशत खेतिहर आबादी जमींन की मालिक नहीं थी। इसलिए अठारहवीं सदी के अंतिम या 19वीं सदी के आरंभिक वर्षों में भारत में कम्पनी की सरकार के भूमि सुधारों और मालगुजारी की भारी मांगों ने पूरी ग्रामीण आबादी को इतनी बुरी तरह प्रभावित किया कि देश के विभिन्न भागों में किसान वर्ग के सभी हिस्सों द्वारा अनेक हिंसक प्रतिरोधों में भाग लिया गया।